अध्याय छयालीसवाँ

॥श्री गणेशाय नम:॥ श्री सरस्वत्यै नम:॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नम:॥

"आप का नाम जपने से आनंद प्राप्त होता है, जिससे इस भव सागर में किसी भी प्रकार का दुख नहीं होता। आप का नाम जप ने से मेरे मन में अभेद की भावना निर्माण होने दीजिए। हे सिद्धारूढ़जी, मैं आप को प्रणाम करता हूँ।"
हे सतगुरुनाथजी, मन ही मन आप की आराधना करने से, आप हृदय में प्रकट होते हैं, जिससे आप की कृपा प्राप्त होकर यह मनुष्य जन्म सार्थ हो जाता है। इस संसार में होने वाले अनेक दुख तथा पीड़ाएँ आप की कृपा से पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं, ऐसी स्थिति में कौन उन दुखों से भयभीत होगा? घर गृहस्थी करनेवालों के लिए यथाविधि सतगुरुजी की पूजा करना यह एकमात्र उपाय है, जिससे उनके सभी पाप नष्ट होकर उनका मन शुद्ध हो जाता है। घर गृहस्थी करनेवालों को इसी बात का उपदेश करने के लिए ही, हे सतगुरुनाथजी, आप साधु रूप में अवतार धारण करके उनके जन्म व्यर्थ होने नहीं देते। शरणप्पा अक्कलकोट नाम के एक साधु थे, वे सतगुरुजी से अत्यंत स्नेह करते थे। लोगों में उनकी बहुत कीर्ति फैली थी। कीर्तन के रूप में वे प्रतिदिन सतगुरुजी की सेवा करते थे। सावन तथा महाशिवरात्री के समारोह में वे अचूक सतगुरुजी से भेंट करने आते थे, अन्यथा अनेक राज्यों में जाकर वहाँ कीर्तन करते थे।

शरणप्पा बचपन से शिवलिंग तथा जंगमों की प्रेम पूर्वक पूजा करता था; वह वीरशैव धर्म का समर्थक होकर गुरु भक्ति, गुरु चिंतन तथा परोपकार करने में तल्लीन रहता था। आगे चलकर उन्होंने वीरशैव धर्म में जो भेद थे, उन में एकता लायी, त्रिषष्ठीमंडप अल्दी में रचकर सभी बुजुर्ग जंगमों की पूजा की। जंगम तथा विद्यार्थियों के लिए अनेक मठ तथा पाठशालाओं की स्थापना की। अकाल से त्रस्त जनों के लिए उन्होंने एक वर्ष तक अन्न तथा वस्त्र दिए। वे मन ही मन कहते थे की अगर वे संत श्री बसवण्णा के जमाने में होते तो उनकी बहुत सेवा करते। उनके मन की बात समझकर उनके गुरु मल्लिकार्जुन ने उन्हें कहा, "फिलहाल बसवण्णा ने हुबली में अवतार धारण किया है। सिद्धारूढ़जी अवतारी व्यक्ति होकर इस पृथ्वी पर उन्होंने अवतार धारण किया है।" यह सब सुनकर शरणप्पा हुबली गए, वहाँ सिद्धारूढ़जी से मिलकर उन्हें

अत्यंत आनंद हुआ। इस से पूर्व बहुत समय तक योगाभ्यास करने के बावजूद भी उन्हें स्वरूप ज्ञान नहीं हुआ था, परंतु सिद्धारूढ़जी के सान्निध्य में आने के पश्चात कुछ ही समय में उन्हें ज्ञान प्राप्ति हो गयी। जिससे उनका मन तथा वृत्तियाँ सतगुरुजी के चरणों पर स्थिर हो गयी, उसी प्रकार उन्हें सिद्धारूढ़जी की महिमा की बार बार प्रतीति हो गयी। इसलिए लोगों को सिद्धगुरुजी की महिमा का बयान करने की मनोकामना करके वे अनेक राज्यों की यात्रा करते थे। वे अनेक गाँव और शहरों में जाकर वहाँ भक्तगणों को इकट्ठा करके, उन्हें सिद्धारूढ़जी ही साक्षात ईश्वर का अवतार है, इस प्रकार का बोध करते थे। चूँकि वे हमेशा सिद्धजी का ही नाम जपते थे, उनके हृदय में सिद्धारूढ़जी के प्रति स्नेह उमड़ पड़ता था। वे अप्रतिम रूप से कीर्तन करते थे, जिसे सुनकर श्रोताओं को परमानन्द प्राप्त होता था। उनके कीर्तन में अत्यंत भक्ति भाव उमड़ पड़ने के कारण श्रोताओं के आँखों से अविरत अश्रुधाराएँ बहती थी। ऐसे लगता था की मानो प्रत्यक्ष संत तुकाराम महाराज (सतरहवी शताब्दी के प्रख्यात महाराष्ट्र के संत जिनके लिखे ग्रंथ देश विदेश में प्रसिद्ध हैं) फिर से देह धारण करके अवतरित हुए हो। वे सतगुरुजी की भक्ति का लोगों में प्रसार करने के कारण स्वाभाविक रूप से लोग सतगुरुजी से मिलने की मनोकामना करते थे; ऐसा होते ही वे सभी जनों को लेकर सिद्धाश्रम पधारकर उन्हें सिद्धारूढ़जी से मिलवाते थे। समारोह के लिए आते समय शरणप्पा अपने साथ हजारों भक्तगण लेकर आते थे तथा उन्हें गुरुचरणों का प्रसाद प्राप्त होते ही स्वयं को धन्य समझते थे। एकबार जो मनुष्य सतगुरुजी के सान्निध्य में आता था, उसके मन में गुरु भक्ति स्थिर हो जाती थी, उसके पश्चात वह मनुष्य कभी भी गुरुचरणों को नहीं छोड़ता था, ऐसी उन चरणों की महिमा हैं। अगर कभी भक्तगण शरणप्पा से पूछते की उनकी कोई संतान नहीं हैं तो उन्हें किस भगवान की पूजा करनी चाहिए, तो शरणप्पा उन्हें कहते की हुबली में रहने वाले सिद्धारूढ़जी साक्षात शिवजी का अवतार हैं तथा उनका समारोह माघ और सावन के महीनों में संपन्न होने के कारण अगर वे उस समारोह में हिस्सा लेंगे तो उनकी मनोकामनाएँ पूरी होंगी। इस प्रकार जो भक्तगण शरणप्पा के शब्दों पर विश्वास करके समारोह में उपस्थित रहकर सिद्धजी के चरणों के दर्शन करते थे, उनकी

मनोकामनाएँ पूरी हो जाती थी। एकबार उनका विश्वास स्थिर होने के पश्चात वे आजीवन नियमित रूप से समारोह में शामिल होते थे, जिससे सिद्धनाथजी के दर्शन करने से मृत्युलोक तथा परलोक में भी सुखी होने का उन्हें भरोसा रहता था। एकबार हुबली के समीप होने वाले उणकल नाम के गाँव के सभी भक्तगणों ने शरणप्पा से प्रार्थना की, "हे शिवभक्त होने वाले शरणप्पा, कृपा करके आप हमारे गाँव आकर एक महीने तक कीर्तन कीजिए, जिससे हम कृतकृत्य हो जाएँगे।" उनकी बात सुनकर शरणप्पा ने कहा, "मैं अवश्य आपके गाँव आकर कीर्तन करूँगा, परंतु आप सभी लोग मिलकर मेरी एक मनोकामना पूरी कीजिए। मैं चाहता हूँ की आप सभी मिलकर सावन महीने के एक सोम को खाना बनाकर बैलगाड़ियों में लादकर जाकर सिद्धारूढ़जी को अर्पण करें। अगर आप इस प्रकार की सेवा करेंगे तो मैं अवश्य आप के गाँव आकर कीर्तन करूँगा।" यह सुनकर गाँव वाले संतुष्ट हो गए तथा उसे बोले की वे उनकी संगती में रहकर धन्य हो जाएँगे; उसपर सभी ने एकमत होकर शरणप्पा का प्रस्ताव स्वीकार किया। उसपर शरणप्पा उणकल गाँव गए और जहाँ हजारों लोग इकट्ठा हुए थे वहाँ उन्होंने प्रेम पूर्वक कीर्तन किया। सभी ने कीर्तन में सिद्धनाथजी की महिमा सुनी तथा उनके नाम की जयजयकार की; कीर्तन में इतना रंग जम गया की लोग अपने आप को भूल गए। कीर्तन सुनने के लिए भूतबाधा हुई दो महिलाएँ आकर बैठी थी, सिद्धनाथजी की जयजयकार सुनते ही उनके भूत उन्हें छोड़कर भाग गए। ये सब देखकर हर्षित हुए लोग कहने लगे की शरणप्पा की संगती से उन्हें बड़ा लाभ हो रहा हैं। उसपर शरणप्पा ने सभी को समारोह की तैयारी करने का आदेश दिया।

एक हजार करताल इकट्ठा किए गए, उतने सारे करताल लेकर भजन करते हुए जाने का भक्तगणों ने निश्चय किया। गाँव वाले ईश्वर के नाम की जयजयकार करते हुए गाँव के बाहर निकल पड़े। उनके पीछे पीछे, सुंदर साड़ियाँ तथा भरपूर गहने पहनकर सजी हुई सुहागिनें हाथों में आरती की थालियाँ लेकर सतगुरुजी के मंगल गीत गाती हुए निकली। उन सुहागिनों के पीछे पीछे, कोमल हरे पत्तों से सजाई हुई, मिष्टान्न, पकवानों से तथा चावल, सब्जियों से लबालब भरी हुई बैलगाड़ियाँ निकल पड़ी। सभी प्रकार के वाद्य एकसाथ बजने के कारण उनके

निनाद से मानो अंबर भर गया हो ऐसे लग रहा था; भक्तगणों ने एकसाथ ईश्वर के नाम की जयजयकार करने के कारण उनकी आवाज से त्रिभुवन गूँज उठा। उणकल से हुबली तक के एक कोस फासले के मार्ग पर दोतरफा भक्तगण भजन गाते हुए तथा सतगुरुजी का नाम लेते हुए चल रहे थे। इन सभी भक्तगणों से मिलने के लिए सिद्धनाथजी सिद्धाश्रम में उन्हीं की प्रतिक्षा कर रहे थे, मध्याह्न होने से पूर्व भक्तगण सिद्धाश्रम में प्रवेश करने लगे। तालाब के किनारे सभी के लिए पत्तलों में भोजन परोसा गया और दस हजार लोक एक साथ ही भोजन करने बैठ गए। ईश्वर के नाम की जयजयकार करते करते पकवान परोसे जा रहे थे। भक्तगण भोजन करते समय, एक ऊँचे आसन पर बैठकर सतगुरु महाराज आनंदित होकर उन्हें देख रहे थे; भक्तों के सुख से वे सुखी हो रहे थे। इस प्रकार दस हजार लोग छह पंक्तियों में भोजन करने बैठ गए, अर्थात सभी मिलकर कुल मिलाकर साठ हजार लोगों ने भोजन किया; यह देखकर शरणप्पा को अत्यंत हर्ष हुआ। उसके पश्चात सभी लोगों को मिलाकर, सतगुरुजी के सामने शरणप्पा ने दो घंटे तक कीर्तन किया। कीर्तन करके तुष्ट हुए शरणप्पा ने घर लौटने वाले लोगों से कहा की सतगुरुजी को उणकल गाँव ले जाकर उनकी पूजा करने से वे सभी धन्य हो जाएँगे। कुछ दिनों के पश्चात उणकल गाँव के भक्तों ने अत्यंत वैभव पूर्ण रीति से सतगुरुजी की पूजा करने की तैयारी आरंभ की। उन्होंने शरणप्पा से कहा, "महाराज तो हुबली छोड़कर बाहर कहीं भी नहीं जाते, तो फिर अगर आपकी प्रार्थना सुनकर वे उणकल गाँव पधारेंगे तो हम निश्चित ही अत्यंत आदर के साथ उनकी पूजा करेंगे।" उनकी बात सुनकर शरणप्पा सतगुरुजी के पास पहुँचे और उनसे कहा, "गुरुनाथजी, उणकल गाँव के भक्तगण आपको वहाँ ले जाकर आपकी यथाविधि पूजा करना चाहते हैं; उन्होंने पूजा की सारी तैयारी की है। इसलिए, उनकी पूजा स्वीकारने हेतु आप कृपा करके वहाँ तक चलिए।" इतने में हुबली के भक्तों ने कहा, "स्वामीजी हुबली छोड़कर कहीं नहीं जाते इसलिए आप उन्हें उणकल गाँव मत ले जाईए, हम भी उन्हें यहाँ से जाने नहीं देंगे।" उसपर शरणप्पा ने कहा, "भले ही आप उन्हें मत छोड़िए। परंतु तमाम हुबली के भक्तों को मैं अभी आमंत्रित करता हूँ। आप लोगों से विनम्रता से बिनति करता हूँ की आप सभी लोग

सतगुरुजी को साथ लेकर उणकल गाँव आईए, आप सभी के भोजन की पूरी तैयारी वहीं पर की गयी है। भोजन के पश्चात तैयार किए मँडवे में सतगुरुजी की पूजा होगी, वह पूजा देखकर आप सतगुरुजी को तुरंत सिद्धाश्रम वापस ले जाईए।" शरणप्पा के वे विनम्र बोल सुनकर सभी भक्त हर्षित हुए। सतगुरुजी ने शरणप्पा से कहा की वे उनकी मनोकामना पूरी करवा ले।

उसपर एक योग्य दिन निश्चित करके सब तैयारी करने के उपरांत उणकल के भक्तगण सिद्धारूढ़जी को आमंत्रित करने आए। हुबली के हजारो भक्तगणों को भी उणकल के समारोह के लिए आमंत्रित किया हुआ होने के कारण, सतगुरुजी को पालकी में बिठाकर उनके साथ मानो एक जन सागर ही निकल पड़ा। सतगुरुजी का मनोहर रूप देखते हुए, भजन गाते हुए तथा गुरु नाम की जयजयकार करते हुए और विविध प्रकार के वाद्य बजाते हुए भक्तगण निकल पड़े। सिर पर सोने का चमकदार, सुंदर तथा शोभायमान मुकुट पहनकर, सौजन्यता पूर्ण तथा मूर्तिमान शांति होने वाले सतगुरुजी पालकी में शोभान्वित हो रहे थे। सतगुरुजी ने सुवर्ण फुलों का कढ़ाव होने वाले चमकदार लाल रंग के रेशम के वस्त्र पहने थे, जिन्हें देखकर मन उत्साहित हो रहा था। सभी लोगों की निगाहें सतगुरुजी के चेहरे पर टिकी थी और उनके चेहरे की ओर देखते देखते भक्तजनों के मन में प्रेम सागर उमड़ पड़ रहा था; उन्हें एक अद्भुत सुख की अनुभूति हो रही थी। उनकी दृष्टि भक्तों पर पड़ते ही उनकी हृदयग्रंथियाँ खट से टूटकर जीव स्थिति (अज्ञान की स्थिति) नष्ट होकर ब्रह्म स्थिति (मुक्तता) प्राप्त होने की भावना उन्हें हो रही थी। उणकल पहुँचते ही शुभ समय पर सतगुरुजी पालकी से उतरे तथा भक्तों ने उन्हें मँडवे में ले जाकर एक गद्दी पर बिठाया। दोपहर होते ही एक मैदान में भक्तगणों के लिए पंक्तियों में भोजन की व्यवस्था की गयी; लगभग एक लाख लोग भोजन कर रहे थे। एक सरोवर के किनारे भक्तों का समूह भोजन करता हुआ देखकर शरणप्पा फूले नहीं समा रहे थे| वे सतगुरुजी का हाथ पकड़कर वहाँ ले गए और एक ऊँचे आसन पर उन्हें बिठाया। जिस प्रकार मानसरोवर के किनारे राजहंस तथा बतख विहार करते हुए दिखाई पड़ते हैं, उसी प्रकार सरोवर के किनारे वह असीम जनसागर पंक्तियों में भोजन करने बैठा था। जिन्हें भक्तों के सुख से सुख मिलता हैं तथा

जो सुख देवदेवताओं के लिए भी दुर्लभ है, ऐसा सुख तथा आनंद सतगुरुजी को वह अद्‌भुत दृष्य देखने से हो रहा था। सतगुरुजी ने शरणप्पा से कहा, "यह समारोह आप ने किस प्रकार सफल किया?" शरणप्पा ने कहा, "महाराज, यह तो आपकी महिमा का प्रभाव है। मैं प्रतिदिन सब के सामने कीर्तन में आपकी महिमा तथा गुणों का बयान करता हूँ, जिससे इन लोगों के मन शुद्ध होकर वे ऐसे कार्य में अगवा सके।" भोजन समाप्त होने के पश्चात सतगुरुजी को मँडवे में बिठाकर अत्यंत वैभव पूर्ण रीति से भक्तों ने उनकी पूजा की; उस पूजा का बयान शब्दों में करना असंभव है। पूजा संपन्न होने के पश्चात सतगुरुजी को फिर से पालकी में बिठाकर बाजागाजे के साथ सभी भक्तगण हुबली के सिद्धाश्रम लौटे। इस प्रकाअ जनोद्धार के लिए शरणप्पा ने जितने प्रयास किए, उन सारे प्रयासों को सतगुरुजी ने स्वयं सफल किया।

एकबार सावन महीने में शरणप्पा गोकाक से हुबली आने के लिए जब निकले थे, तब मार्ग में घटप्रभा नदी में प्रचंड बाढ़ आई थी तथा नदी का जल दोनो तटों को पार करके बह रहा था। उस दिन सतगुरुजी के दर्शन किए बगैर भोजन का एक दाना तक न खाने का निश्चय करके वे भावावस्था में इधर के तट पर खड़े थे। वहाँ एक ही नाव थी, परंतु बाढ़ के पानी में वह कहाँ बह गयी किसी को पता तक नहीं चला; मजबूरी से परले तट तक जाने वाले अन्य प्रवासी वहाँ इंतजार करते हुए खड़े थे। बहुत समय तक इंतजार करने के पश्चात वे सभी लोग अपने अपने घर लौटे, परंतु शरणप्पा इस तट पर खड़े होकर सतगुरुजी की जयजयकार कर ही रहे थे। सभी लोगों ने उन्हें समझाया की सुबह तक बाढ़ का पानी घट जाने के पश्चात वे परले तट पर जा पाएँगे, इसलिए फिलहाल वे घर लौट जाए। परंतु सतगुरुजी के दर्शन किए बगैर कदापि वे भोजन नहीं करेंगा ऐसा शरणप्पा के कहने के उपरांत सभी लोग उन्हें इस तट पर छोड़कर घर लौटे। इतने में सूरज डूबकर धीरे धीरे चारो ओर अँधेरा छाने लगा, परंतु शरणप्पा निश्चय पूर्वक गुरुनाथजी की प्रार्थना करते हुए वहीं रहे। उन्होंने कहा, "हे सिद्धसतगुरुजी, अगर आप समय पर यहाँ नहीं पहुँच पाएँगे तो, समारोह के समय कीर्तन करने का मेरा नियम पूरा नहीं हो पाएगा। जब आप भव सागर में से भक्तों को तारकर परले तट पर ले जाते हैं, तब इस क्षुद्र नदी की बात ही

क्या है! कृपा करके मुझे तारने के लिए जल्दी इधर आईए तथा आप की पूजा के समय वहाँ ले जाईए। अगर आप मेरे निश्चय की परीक्षा लेना चाहते हैं, तो अभी लीजिए।" ऐसा कहते हुए अगले ही पल शरणप्पा नदी के जल में "सिद्धारूढ़जी" कहते हुए उतर गए, और देखते देखते वे नदी के प्रवाह में बहते हुए जाने लगे| तत्काल वहाँ सतगुरुजी प्रकट हुए। एक नाव में बैठकर सतगुरुजी वहाँ प्रकट हुए तथा नाव शरणप्पा के समीप ले जाकर उन्हें बाढ़ के पानी में से खींचकर बाहर करके नाव में बिठाया और परले तट पर ले गए। परले तट पर उतरते ही शरणप्पा अचानक सचेत हुए, उन्होंने उठकर देखा तो वहाँ कोई भी न था। भावावेश में उन्होंने कहा, "हे सतगुरुजी, आप अनाथों के समर्थक हैं। आप ही ने मुझे इस महा भयानक बाढ़ से बचाया और एक ही क्षण में अंतर्धान हो गए।" उसके उपरांत शरणप्पा हुबली गए और सिद्धनाथजी से मिलकर वे बाढ़ के जल में बह जाते समय जो कुछ हुआ वह सारा वृत्तांत बयान किया। सिद्धनाथजी ने कहा, "मोह के प्रवाह में बह जाने वाले जीवात्मा की रक्षा करने वाला सतगुरुजी के बिना अन्य कोई भी नहीं है।" आगे चलकर शरणप्पा ने जनहित तथा सतगुरुजी की महिमा का प्रचार करने के लिए अनेक प्रयत्न किए, उनमें से एकाध आप को बयान करता हूँ।

सिद्धनाथजी की सेवा के तौर प्रर शरणप्पा महाशिवरात्री तथा सावन महीने के समारोह में अन्नसत्र का आयोजन करते थे। लगभग सौ बोरी अनाज लाकर वे अनगिनत लोगों को भोजन कराते थे। उसी प्रकार विविध स्थानों पर जाकर भजन तथा कीर्तन के व्दारा सिद्धजी की महिमा का बयान करते थे। सबसे प्रथम जिस स्थान पर शरणप्पा को सतगुरुजी के दर्शन हुए, उस स्थान को पवित्र समझकर उन्होंने वह स्थान खरीद लिया और वहाँ साधु संन्यासियों के लिए एक धर्मशाला तथा भजन मंदिर का निर्माण कराया और दिनरात वहाँ वे सिद्धजी के भजन के कार्यक्रम का आयोजन करने लगे। चार अन्य गाँवों में भी उन्होंने इसी प्रकार के भजन मंदिरों की स्थापना कराई तथा अनेक गाँवों में सतगुरुजी का भजन तथा सतगुरुजी की जीवनी पर प्रवचन के कार्यक्रमों का आयोजन कराया। सिद्धजी की महिमा का प्रचार करने के लिए उन्होंने विविध रियासतों के राजा महाराजाओं से मिलकर वहाँ शिष्य समुदाय बढ़ाया तथा वहाँ

के लोगों को पंचाक्षरी मंत्र की दीक्षा दी। वहाँ वे हर एक को सिद्धजी की जीवनी लिखी हुई किताब तथा उनकी तसवीर देकर उनसे सिद्धस्तोत्र (सिद्धजी की महिमा का स्तुतिगीत) कंठस्थ कराते थे। इस प्रकार के जनोद्धार के अनेक कार्य वे करते थे। उन्होंने जैन साधु पन्नालाल महाराज को महाशिवरात्री के समारोह में चाँदी के रथ में बिठाकर केशलुंचन (सिर के बाल हाथों से उखाडने की जैन धर्म की एक विधि) कार्यक्रम के लिए लाया था। उसी प्रकार, वे यड्डळ्ळी और चिम्मड महाराज, इन दो साधुओं को तथा अन्य अनेक महात्माओं को सिद्धारूढ़जी से मिलने के लिए लेकर आए और उनकी भेंट कराकर मन ही मन संतुष्ट हुए। एकबार उन्होंने सतगुरुजी को रुद्राक्ष मंडप में बिठाकर अत्यंत वैभव पूर्ण रीति से उनकी पूजा की। जिनका मन हमेशा लोकोद्धार के कार्य में तल्लीन रहता था और जिन्होंने करुणामय तथा आनंद रूप परमात्मा से स्नेह संबंध प्रस्थापित किए, ऐसे शरणप्पा को सचमुच ही धन्य समझना चाहिए। सिद्धनाथजी का नाम लेने से सारे कार्य वे स्वयं पूरे करते हैं तथा उनका चिंतन करने से वे भव बंधन से भक्त को मुक्त कराते हैं। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह छयालीसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥